रावण का युद्ध के लिए प्रस्थान और श्री रामजी का विजयरथ तथा वानर-राक्षसों का युद्ध

दोहा :

*** ताहि कि संपति सगुन सुभ सपनेहुँ मन बिश्राम। भूत द्रोह रत मोहबस राम बिमुख रति काम॥78॥

भावार्थ:-

जो जीवों के द्रोह में रत है, मोह के बस हो रहा है, रामविमुख है और कामासक्त है, उसको क्या कभी स्वप्न में भी सम्पत्ति, शुभ शकुन और चित्त की शांति हो सकती है?॥78॥

चौपाई :

*** चलेउ निसाचर कटकु अपारा। चतुरंगिनी अनी बहु धारा॥ बिबिधि भाँति बाहन रथ जाना। बिपुल बरन पताक ध्वज नाना॥1॥

भावार्थ:-

राक्षसों की अपार सेना चली। चतुरंगिणी सेना की बहुत सी Uटुकड़ियाँ हैं। अनेकों प्रकार के वाहन, रथ और सवारियाँ हैं तथा बहुत से रंगों कीअनेकों पताकाएँ और ध्वजाएँ हैं॥1॥

*** चले मत्त गज जूथ घनेरे। प्राबिट जलद मरुत जनु प्रेरे॥ बरन बरन बिरदैत निकाया। समर सूर जानहिं बहु माया॥2॥

भावार्थ:-

मतवाले हाथियों के बहुत से झुंड चले। मानो पवन से प्रेरित हुएवर्षा ऋतु के बादल हों। रंग-बिरंगे बाना धारण करने वाले वीरों के समूह हैं, जो युद्ध में बड़े शूरवीर हैं और बहुत प्रकार की माया जानते हैं॥2॥

*** अति बिचित्र बाहिनी बिराजी। बीर बसंत सेन जनु साजी॥ चलत कटक दिगसिंधुर डगहीं। छुभित पयोधि कुधर डगमगहीं॥3॥

भावार्थ:-

अत्यंत विचित्र फौज शोभित है। मानो वीर वसंत ने सेना सजाई हो। सेना के चलने से दिशाओं के हाथी डिगने लगे, समुद्र क्षुभित हो गए और पर्वत डगमगाने लगे॥3॥

*** उठी रेनु रबि गयउ छपाई। मरुत थकित बसुधा अकुलाई॥ पनव निसान घोर रव बाजहिं। प्रलय समय के घन जनु गाजहिं॥4॥

भावार्थ:-

इतनी धूल उड़ी कि सूर्य छिप गए। (फिर सहसा) पवन रुक गया और पृथ्वी अकुला उठी। ढोल और नगाड़े भीषण ध्वनि से बज रहे हैं, जैसे प्रलयकाल के बादल गरज रहे हों॥4॥

*** भेरि नफीरि बाज सहनाई। मारू राग सुभट सुखदाई॥ केहरि नाद बीर सब करहीं। निज निज

बल पौरुष उच्चरहीं॥5॥

भावार्थ:-

भेरी, नफीरी (तुरही) और शहनाई में योद्धाओं को सुख देने वाला मारू राग बज रहा है। सब वीर सिंहनाद करते हैं और अपने-अपने बल पौरुष का बखान कर रहे हैं॥5॥

*** कहइ दसानन सुनहू सुभट्टा। मर्दहु भालु कपिन्ह के ठट्टा हौं मारिहउँ भूप द्वौ भाई। अस कहि सन्मुख फौज रेंगाई॥6॥

भावार्थ:-

रावण ने कहा- हे उत्तम योद्धाओं! सुनो तुम रीछ-वानरों के ठट्ट को मसल डालो और मैं दोनों राजकुमार भाइयों को मारूँगा। ऐसा कहकर उसने अपनी सेना सामने चलाई॥6॥

*** यह सुधि सकल कपिन्ह जब पाई। धाए करि रघुबीर दोहाई॥7॥

भावार्थ:-

जब सब वानरों ने यह खबर पाई, तब वे श्री राम की दुहाई देते हुए दौड़े॥7॥ छंद :

*** धाए बिसाल कराल मर्कट भालु काल समान ते। मानहुँ सपच्छ उड़ाहिंभूधर बृंद नाना बान ते॥ नख दसन सैल महाद्रुमायुध सबल संक न मानहीं। जय राम रावन मत्त गज मृगराज सुजसु बखानहीं॥

भावार्थ:-

वे विशाल और काल के समान कराल वानर-भालू दौड़े। मानो पंख वाले पर्वतों के समूह उड़ रहे हों। वे अनेक वर्णों के हैं। नख, दाँत, पर्वत और बड़े-बड़े वृक्ष ही उनके हथियार हैं। वे बड़े बलवान् हैं और किसी का भी डर नहीं मानते। रावण रूपी मतवाले हाथी के लिए सिंह रूप श्री रामजी का जय-जयकार करके वे उनके सुंदर यश का बखान करते हैं।

दोहा :

*** दुहु दिसि जय जयकार करि निज जोरी जानि। भिरे बीर इत रामहि उत रावनहि बखानि॥79॥

भावार्थ:-

दोनों ओर के योद्धा जय-जयकार करके अपनी-अपनी जोड़ी जान (चुन) कर इधर श्री रघुनाथजी का और उधर रावण का बखान करके परस्पर भिड़ गए॥79॥

चौपाई :

*** रावनु रथी बिरथ रघुबीरा। देखि बिभीषन भयउ अधीरा॥ अधिक प्रीति मन भा संदेहा। बंदि चरन कह सहित सनेहा॥1॥

भावार्थ:-

रावण को रथ पर और श्री रघुवीर को बिना रथ के देखकर विभीषण अधीर हो गए। प्रेम अधिक होने से उनके मन में सन्देह हो गया (कि वे बिना रथ के रावण को कैसे जीत सकेंगे)। श्री

रामजी के चरणों की वंदना करके वे स्नेह पूर्वक कहने लगे॥1॥

*** नाथ न रथ नहि तन पद त्राना। केहि बिधि जितब बीर बलवाना॥ सुनहु सखा कह कृपानिधाना। जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना॥2॥

भावार्थ:-

हे नाथ! आपके न रथ है, न तन की रक्षा करने वाला कवच है और न जूते ही हैं। वह बलवान् वीर रावण किस प्रकार जीता जाएगा? कृपानिधान श्री रामजी ने कहा- हे सखे! सुनो, जिससे जय होती है, वह रथ दूसरा ही है॥2॥

*** सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका॥ बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे॥3॥

भावार्थ:-

शौर्य और धैर्य उस रथ के पहिए हैं। सत्य और शील (सदाचार) उसकी मजबूत ध्वजा और पताका हैं। बल, विवेक, दम (इंद्रियों का वश में होना) और परोपकार- ये चार उसके घोड़े हैं, जो क्षमा, दया और समता रूपी डोरी से रथ में जोड़े हुए हैं॥3॥

*** ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना॥ दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा॥4॥

भावार्थ:-

ईश्वर का भजन ही (उस रथ को चलाने वाला) चतुर सारथी है। वैराग्य ढाल है और संतोष तलवार है। दान फरसा है, बुद्धि प्रचण्ड शक्ति है, श्रेष्ठ विज्ञान कठिन धनुष है॥4॥

*** अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना॥ कवच अभेद बिप्र गुर पूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा॥5॥

भावार्थ:-

निर्मल (पापरहित) और अचल (स्थिर) मन तरकस के समान है। शम (मन का वश में होना), (अहिंसादि) यम और (शौचादि) नियम- ये बहुत से बाण हैं।ब्राह्मणों और गुरु का पूजन अभेद्य कवच है। इसके समान विजय का दूसरा उपाय नहीं है॥5॥

*** सखा धर्ममय अस रथ जाकें। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें॥6॥

भावार्थ:-

हे सखे! ऐसा धर्ममय रथ जिसके हो उसके लिए जीतने को कहीं शत्रु ही नहीं है॥6॥

दोहा :

*** महा अजय संसार रिपु जीति सकइ सो बीर। जाकें अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर॥80 क॥

भावार्थ:-

हे धीरबुद्धि वाले सखा! सुनो, जिसके पास ऐसा दृढ़ रथ हो, वह वीर संसार (जन्म-मृत्यु) रूपी महान्

दुर्जय शत्रु को भी जीत सकता है (रावण की तो बात ही क्या है)॥80 (क)॥

*** सुनि प्रभु बचन बिभीषन हरषि गहे पद कंज। एहि मिस मोहि उपदेसेहु राम कृपा सुख पुंज॥80 ख

भावार्थ:-

प्रभु के वचन सुनकर विभीषणजी ने हर्षित होकर उनके चरण कमल पकड़ लिए(और कहा-) हे कृपा और सुख के समूह श्री रामजी! आपने इसी बहाने मुझे(महान्) उपदेश दिया॥80 (ख)॥

*** उत पचार दसकंधर इत अंगद हनुमान। लरत निसाचर भालु कपि करि निज निज प्रभु आन॥80 ग॥

भावार्थ:-

उधर से रावण ललकार रहा है और इधर से अंगद और हनुमान्। राक्षस और रीछ-वानर अपने-अपने स्वामी की दुहाई देकर लड़ रहे हैं॥80 (ग)॥

चौपाई :

*** सुर ब्रह्मादि सिद्ध मुनि नाना। देखत रन नभ चढ़े बिमाना॥ हमहू उमा रहे तेहिं संगा। देखत राम चरित रन रंगा॥1॥

भावार्थ:-

ब्रह्मा आदि देवता और अनेकों सिद्ध तथा मुनि विमानों पर चढ़े हुएआकाश से युद्ध देख रहे हैं। (शिवजी कहते हैं-) हे उमा! मैं भी उस समाज में था और श्री रामजी के रण-रंग (रणोत्साह) की लीला देख रहा था॥1॥

*** सुभट समर रस दुहु दिसि माते। कपि जयसील राम बल ताते॥ एक एक सन भिरहिं पचारहिं। एकन्ह एक मर्दि महि पारहिं॥2॥

भावार्थ:-

दोनों ओर के योद्धा रण रस में मतवाले हो रहे हैं। वानरों को श्री रामजी का बल है, इससे वे जयशील हैं (जीत रहे हैं)। एक-दूसरे से भिड़ते और ललकारते हैं और एक-दूसरे को मसल-मसलकर पृथ्वी पर डाल देते हैं॥2॥

*** मारहिं काटहिं धरहिं पछारहिं। सीस तोरि सीसन्ह सन मारहिं॥ उदर बिदारहिं भुजा उपारहिं। गहि पद अवनि पटकि भट डारहिं॥3॥

भावार्थ:-

वे मारते, काटते, पकड़ते और पछाड़ देते हैं और सिर तोड़कर उन्हीं सिरों से दूसरों को मारते हैं। पेट फाड़ते हैं, भुजाएँ उखाड़ते हैं और योद्धाओं को पैर पकड़कर पृथ्वी पर पटक देते हैं॥3॥

*** निसिचर भट महि गाड़हिं भालू। ऊपर ढारि देहिं बहु बालू॥ बीर बलीमुख जुद्ध बिरुद्धे। देखिअत बिपुल काल जनु क्रुद्धे॥4॥

भावार्थ:-

राक्षस योद्धाओं को भालू पृथ्वी में गाड़ देते हैं और ऊपर से बहुतसी बालू डाल देते हैं। युद्ध में शत्रुओं से विरुद्ध हुए वीर वानर ऐसेदिखाई पड़ते हैं मानो बहुत से क्रोधित काल हों॥4॥

छंद :

*** क्रुद्धे कृतांत समान कपि तन स्रवत सोनित राजहीं। मर्दहिं निसाचर कटक भट बलवंत घन जिमि गाजहीं॥ मारहिं चपेटन्हि डाटि दातन्ह काटि लातन्ह मीजहीं। चिक्करहिं मर्कट भालु छल बल करहिं जेहिं खल छीजहीं॥1॥

भावार्थ:-

क्रोधित हुए काल के समान वे वानर खून बहते हुए शरीरों से शोभित हो रहे हैं। वे बलवान् वीर राक्षसों की सेना के योद्धाओं को मसलते और मेघ की तरह गरजते हैं। डाँटकर चपेटों से मारते, दाँतों से काटकर लातों से पीस डालते हैं। वानर-भालू चिग्घाड़ते और ऐसा छल-बल करते हैं, जिससे दुष्ट राक्षस नष्ट हो जाएँ॥1॥

*** धरि गाल फारहिं उर बिदारहिं गल अँतावरि मेलहीं। प्रहलादपति जनु बिबिध तनु धरि समर अंगन खेलहीं॥ धरु मारु काटु पछारु घोर गिरा गगन महि भरि रही। जय राम जो तृन ते कुलिस कर कुलिस ते कर तृन सही॥2॥

भावार्थ:-

वे राक्षसों के गाल पकड़कर फाड़ डालते हैं, छाती चीर डालते हैं और उनकी अँतड़ियाँ निकालकर गले में डाल लेते हैं। वे वानर ऐसे दिख पड़ते हैं मानो प्रहलाद के स्वामी श्री नृसिंह भगवान् अनेकों शरीर धारण करके युद्ध के मैदान में क्रीड़ा कर रहे हों। पकड़ो, मारो, काटो, पछाड़ो आदि घोर शब्द आकाश और पृथ्वी में भर (छा) गए हैं। श्री रामचंद्रजी की जय हो, जो सचमुच तृण से वज्र और वज्र से तृण कर देते हैं (निर्बल को सबल और सबल को निर्बल कर देते हैं)॥2॥

दोहा :

*** निज दल बिचलत देखेसि बीस भुजाँ दस चाप। रथ चढ़ि चलेउ दसानन फिरहु फिरहु करि दाप॥81॥

भावार्थ:-

अपनी सेना को विचलित होते हुए देखा, तब बीस भुजाओं में दस धनुषलेकर रावण रथ पर चढ़कर गर्व करके 'लौटो, लौटो' कहता हुआ चला॥81॥

चौपाई :

*** धायउ परम क्रुद्ध दसकंधर। सन्मुख चले हूह दै बंदर॥ गहि कर पादप उपल पहारा। डारेन्हि ता पर एकहिं बारा॥1॥

भावार्थ:-

रावण अत्यंत क्रोधित होकर दौड़ा। वानर हुँकार करते हुए(लड़ने के लिए) उसके सामने चले।

उन्होंने हाथों में वृक्ष, पत्थर और पहाड़ लेकर रावण पर एक ही साथ डाले॥1॥

*** लागहिं सैल बज्र तन तासू। खंड खंड होइ फूटहिं आसू॥ चला न अचल रहा रथ रोपी। रन दुर्मद रावन अति कोपी॥2॥

भावार्थ:-

पर्वत उसके वज्रतुल्य शरीर में लगते ही तुरंत टुकड़े-टुकड़े होकर फूट जाते हैं। अत्यंत क्रोधी रणोन्मत्त रावण रथ रोककर अचल खड़ा रहा, (अपने स्थान से) जरा भी नहीं हिला॥2॥

*** इत उत झपटि दपटि कपि जोधा। मर्दै लाग भयउ अति क्रोधा॥ चले पराइ भालु कपि नाना। त्राहि त्राहि अंगद हनुमाना॥3॥

भावार्थ:-

उसे बहुत ही क्रोध हुआ। वह इधरउधर झपटकर और डपटकर वानर योद्धाओं को मसलने लगा। अनेकों वानर-भालू 'हे अंगद! हे हनुमान्! रक्षा करो, रक्षा करो' (पुकारते हुए) भाग चले॥3॥

*** पाहि पाहि रघुबीर गोसाईं। यह खल खाइ काल की नाईं॥ तेहिं देखे कपि सकल पराने। दसहुँ चाप सायक संधाने॥4॥

भावार्थ:-

हे रघुवीर! हे गोसाईं! रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए। यह दुष्ट काल की भाँति हमें खा रहा है। उसने देखा कि सब वानर भाग छूटे, तब (रावण ने) दसों धनुषों पर बाण संधान किए॥4॥

छंद :

*** संधानि धनु सर निकर छाड़ेसि उरग जिमि उड़ि लागहीं। रहे पूरि सर धरनी गगन दिसि बिदिसि कहँ कपि भागहीं॥ भयो अति कोलाहल बिकल कपि दल भालु बोलहिं आतुरे। रघुबीर करुना सिंधु आरत बंधु जन रच्छक हरे॥

भावार्थ:-

उसने धनुष पर सन्धान करके बाणों के समूह छोड़े। वे बाण सर्प की तरह उड़कर जा लगते थे। पृथ्वी-आकाश और दिशा-विदिशा सर्वत्र बाण भर रहे हैं। वानर भागें तो कहाँ? अत्यंत कोलाहल मच गया। वानर-भालुओं की सेना व्याकुल होकर आर्त्त पुकार करने लगी- हे रघुवीर! हे करुणासागर! हे पीड़ितों के बन्धु! हे सेवकों की रक्षा करके उनके दुःख हरने वाले हरि!

दोहा :

*** निज दल बिकल देखि कटि कसि निषंग धनु हाथ। लछिमन चले क्रुद्ध होइ नाइ राम पद माथ॥82॥

भावार्थ:-

अपनी सेना को व्याकुल देखकर कमर में तरकस कसकर और हाथ में धनुष लेकर श्री रघुनाथजी के चरणों पर मस्तक नवाकर लक्ष्मणजी क्रोधित होकर चले॥82॥

लक्ष्मण-रावण युद्ध

चौपाई :

*** रे खल का मारसि कपि भालू। मोहि बिलोकु तोर मैं कालू॥ खोजत रहेउँ तोहि सुतघाती। आजु निपाति जुड़ावउँ छाती॥1॥

भावार्थ:-

(लक्ष्मणजी ने पास जाकर कहा-) अरे दुष्ट! वानर भालुओं को क्या मार रहा है? मुझे देख, मैं तेरा काल हूँ। (रावण ने कहा-) अरे मेरे पुत्र के घातक! मैं तुझी को ढूँढ रहा था। आज तुझे मारकर (अपनी) छाती ठंडी करूँगा॥1॥

*** अस कहि छाड़ेसि बान प्रचंडा। लछिमन किए सकल सत खंडा॥ कोटिन्ह आयुध रावन डारे। तिल प्रवान करि काटि निवारे॥2॥

भावार्थ:-

ऐसा कहकर उसने प्रचण्ड बाण छोड़े। लक्ष्मणजी ने सबके सैकड़ों टुकड़े कर डाले। रावण ने करोड़ों अस्त्र-शस्त्र चलाए। लक्ष्मणजी ने उनको तिल के बराबर करके काटकर हटा दिया॥2॥

*** पुनि निज बानन्ह कीन्ह प्रहारा। स्यंदनु भंजि सारथी मारा॥ सत सत सर मारे दस भाला। गिरि सृंगन्ह जनु प्रबिसहिं ब्याला॥3॥

भावार्थ:-

फिर अपने बाणों से (उस पर) प्रहार किया और (उसके) रथ को तोड़कर सारथी को मार डाला। (रावण के) दसों मस्तकों में सौ-सौ बाण मारे। वे सिरों में ऐसे पैठ गए मानो पहाड़ के शिखरों में सर्प प्रवेश कर रहे हों॥3॥

*** पुनि सुत सर मारा उर माहीं। परेउ धरनि तल सुधि कछु नाहीं॥ उठाप्रबल पुनि मुरुछा जागी। छाड़िसि ब्रह्म दीन्हि जो साँगी॥4॥

भावार्थ:-

फिर सौ बाण उसकी छाती में मारे। वह पृथ्वी पर गिर पड़ा, उसे कुछ भी होश न रहा। फिर मूर्च्छा छूटने पर वह प्रबल रावण उठा और उसने वह शक्ति चलाई जो ब्रह्माजी ने उसे दी थी॥4॥ छंद :

*** सो ब्रह्म दत्त प्रचंड सक्ति अनंत उर लागी सही। पर्‌यो बीर बिकल उठाव दसमुख अतुल बल महिमा रही॥ ब्रह्मांड भवन बिराज जाकें एक सिर जिमि रज कनी। तेहि चह उठावन मूढ़ रावन जान नहिं त्रिभुअन धनी॥

भावार्थ:-

वह ब्रह्मा की दी हुई प्रचण्ड शक्ति लक्ष्मणजी की ठीक छाती मेंलगी। वीर लक्ष्मणजी व्याकुल

होकर गिर पड़े। तब रावण उन्हें उठाने लगा, पर उसके अतुलित बल की महिमा यों ही रह गई, (व्यर्थ हो गई, वह उन्हें उठा न सका)। जिनके एक ही सिर पर ब्रह्मांड रूपी भवन धूल के एक कण के समान विराजता है, उन्हें मूर्ख रावण उठाना चाहता है! वह तीनों भुवनों के स्वामी लक्ष्मणजी को नहीं जानता।